Research Paper IMPACT FACTOR VALUE : 6.247 | E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 12 | ISSUE : 4 | APRIL 2026

प्रभात की कविताओं में स्त्री दुर्दशा का चित्रण

आनन्द पाराशर [1] | डॉ. रामकृष्ण शर्मा [2]

[1] हिंदी विभाग, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत.

[2] हिंदी विभाग, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत.

ABSTRACT:

समकालीन हिंदी कविता के महत्वपूर्ण आधार स्तंभ 'प्रभात' की काव्य कृतियों में निहित स्त्री-जीवन के कारुणिक पक्षों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत शोध पत्र करता है। कवि प्रभात की कविताएँ—'माँ', 'हे राम', 'जीने की जगह' और 'गोबर की हेल'— ग्रामीण और अर्ध-शहरी परिवेश में महिला की उस दैन्यता को प्रकट करती हैं, जहाँ उसे केवल एक उत्पाद, श्रमिक या भोग - विलास की वस्तु माना जाता है। यह सारांश इस तथ्य को रुपायित करता है कि प्रभात की रचनाओं में स्त्री दुर्दशा केवल आर्थिक अभावों तक सीमित नहीं है, अपितु यह एक गहरी डुबी मानसिक और चेतनावादी त्रासदी है।

उक्त पत्र का मुख्य ध्येय यह है कि किस प्रकार पितृसत्तात्मक संरचनाएँ स्त्री के स्वास्थ्य, शिक्षा, मातृत्व और यहाँ तक कि उसकी मृत्यु को भी एक अत्यंत सामान्य प्रक्रिया की अंतर्गत व्यक्त करती हैं। 'माँ' कविता में माता के रुदन और मजदूरी के बीच का द्वंद्व, 'हे राम' में एक बोध रहित कन्या के सपनों की तिलांजलि, 'जीने की जगह' में ससुराल की प्रताड़ना से जन्मी आत्महत्या और 'गोबर की हेल' में स्त्री के शारीरिक शोषण व सामाजिक क्रूरता का जो वर्णन हुआ है, वह पाठक को अन्तर्जगत तक हिला कर रख देता है। प्रभात की कविताएँ केवल सहानुभूति की मांग नहीं करतीं, अपितु उस व्यवस्था पर प्रश्नवाचक चिह्न लगाती हैं जो स्त्री के खून और अश्रु धारा पर ठहरी है। यहाँ स्त्री की 'दुर्दशा' उसके जन्म से लेकर उसकी अस्थियों के विसर्जन तक एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसे कवि ने अत्यंत सूक्ष्मता और साहस के साथ शब्दों में मणिकांचन रूप प्रदान किया है।

KEYWORDS:

सामाजिक विद्रूपता, प्रभात की कविता, मातृत्व की पीड़ा, स्त्री विमर्श, पितृसत्तात्मक हिंसा, वस्तुकरण, ग्रामीण यथार्थ, मनोवैज्ञानिक शोषण।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
7th April 2026	8th April 2026
PAPER DOI NO:	**PAPER DOI LINK:**
10.5281/zenodo.19466324	https://zenodo.org/records/19466324

प्रस्तावना

साहित्य जब यथार्थ के धरातल पर अवतरित है, तो वह उन ध्वनियों को मुखर करता है जिन्हें समाज ने हाशिए पर धकेल दिया है। इसी श्रेणी में प्रभात की कविताएँ आती हैं।सौंदर्य के अपेक्षा सत्य को, और उल्लास की अपेक्षा उस अंतर्निहित दुःख को चुनते हैं इस दृष्टि से वे आधुनिक हिंदी कविता के ऐसे चितेरे बनकर उभरते हैं जो स्त्री जीवन का मार्मिक चित्र बना देते हैं।हमारे ग्रामीण परिवेश में स्त्री का जीवन अक्सर 'त्याग' और 'ममता' के महिमामंडन के नीचे दबा दिया जाता है, जिससे उसकी वास्तविक पीड़ा और शोषण अदृश्य हो जाते हैं।

प्रभात ने अपनी लेखनी से इस अदृश्य पर्दे को दूर किया है। इनकी कविताओं में महिला एक ऐसी इकाई है जिसके पास अपना कोई स्वतंत्र स्थल नहीं है। उसे पिता विक्रय करता है, पति क्रय करता है और समाज उसकी राख पर भी अपनी मर्यादाओं के गीत गाता है। प्रभात ने इस प्रकार स्त्री के घरेलू श्रम, उसके स्वास्थ्य की अनदेखी और उसके साथ होने वाले भावनात्मक दुर्व्यवहार को वैश्विक मानवीय संकट के रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी कविताओं की भाषा सरल होते हुए भी अपनी मारक क्षमता में अत्यंत तीक्ष्ण है, जो सीधे पाठक की आत्मा पर चोट करती है।

प्रभात की 'माँ' कविता एक स्त्री के मौन विलाप और यंत्रवत हो चुके जीवन का चित्रण करती हैं। मृत्यु का सामान्यीकरण का चित्रण अत्यंत भाव विभोर कर देने वाला हैं।इस कविता में कवि ने उस भयावह यथार्थ को पकड़ा है जहाँ गरीबी के कारण बच्चों की मृत्यु एक दैनिक घटना बन जाती है। माँ के लिए यह केवल शारीरिक श्रम नहीं है, बल्कि उसके मातृत्व पर बार-बार होने वाला प्रहार है। यथा-

बुखार, खाँसी, पसली चलना
कोई कमी न थी कारणों की
किसी भी बहाने से मृत्यु आ जाती
शिशु को लील जाती असमय ही

इसी कविता में रात का सन्नाटा और दुःख का चित्रण मिलता हैं।कवि माँ की उस मानसिक अवस्था का वर्णन करते हैं जहाँ वह दिन भर काम में खुद को झोंक देती है ताकि वह याद न कर सके, किंतु रात उसके धैर्य की परीक्षा लेती है। जब पूरी दुनिया सो जाती है, तब माँ का व्यक्तिगत शोक जागता है। यथा-

रात हो जाती
एक के बाद एक हरेक की आँख लग जाती
माँ को नींद न आती
उसके धैर्य का बाँध टूटने लगता

स्त्री के संघर्ष एवं श्रम का अंतहीन चक्र अनवरत चलायमान रहता हैं।कविता का सबसे दुखद

हिस्सा वह है जहाँ माँ रात भर विलाप करने के पश्चात भी प्रात:काल जागकर फिर से पशुओं के गोबर उठाने में जुट जाती है। उसकी दुर्दशा यह है कि उसे अपने शोक को पूर्णता देने का भी अधिकार नहीं है। यथा-

रात की ओस से उसके कपड़े सील जाते

बैठे-बैठे भोर हो जाती

उठकर बाड़े से गोबर उठाने लगती

प्रभात की एक अन्य कविता 'हे राम' शिक्षा की हत्या एवं स्त्री के वस्तुकरण का चित्रण करती हैं।इस कविता के प्रथम खंड में स्त्री की अधूरी आकांक्षाएं वर्णित हैं।यहाँ एक मर चुकी लड़की की अस्थियों के माध्यम से उसके उन सपनों को दिखाया गया है जिन्हें गरीबी ने कुचल दिया। उसे पढ़ना था, पर वह 'फूल' (अस्थियाँ) बन गई। यथा-

ये उस लड़की की अस्थियाँ हैं

जो घर और खेतों का काम करने के साथ-साथ

पढ़ भी रही थी सरकारी स्कूल में दसवीं में

जिसे अगले बरस ग्यारहवीं में पढ़ना था

इस कविता के द्वितीय खंड में स्त्री के विवाह के व्यापार का घिनौना चित्र दिखाया गया हैं ।कवि उस कड़वे सच को प्रकट करते हैं जहाँ पिता अपनी गरीबी मिटाने के लिए बेटी को 'बेच' देता है और पति उसे केवल पहली पत्नी की 'जगह भरने' के लिए एक वस्तु की तरह 'खरीद' लेता है। यथा-

पिता ने मुझे बेचकर अपनी गरीबी मिटा ली

पति ने मुझे खरीदकर मुझसे पहले वाली के मरने से

खाली हुई जगह भर ली

यह कविता अंत में पुरुषवादी क्रूरता को रेखांकित करती हैं।इस कविता का अंत पुरुष की संवेदनहीनता की पराकाष्ठा है। वह निर्मम पति जो एक पत्नी को जलाकर आया है, अब दूसरी को भी उसी राह पर ले जाने को तैयार है। स्त्री का अस्तित्व यहाँ केवल 'हड्डियों' के ढेर तक सीमित है। यथा-

वह पति भी है गंगाजी को जा रही जीप में

जो एक बार पहले भी एक पत्नी के हाड़ पटक आया है

और अब दूसरी के पटकने जा रहा है

प्रभात अपनी कविता 'जीने की जगह' ससुराल के नरक और स्त्री के अंतिम विद्रोह को क्रांति रूप में व्यक्त करते हैं। स्त्री कार्य करते-करते समय से पहले प्रौढ़ता को धारण कर लेती हैं। कवि अपनी बहन को याद करते हैं जो मात्र सत्रह वर्ष की आयु में दुनिया छोड़ गई। वह दिखाते हैं कि कैसे एक अल्हड़ किशोरी को विवाह के बोझ ने समय से पहले बूढ़ा बना दिया। यथा-

मेरी शादी सत्ताईस की उम्र में हुई

तेरी सोलह की उम्र में हो गई थी

और एक बरस बाद तू फंदे से झूल गई थी

एक स्त्री की सबसे बड़ी दुर्दशा यह है कि वह मरना चाहती है, रोती है, पर कोई उसकी चुप्पी को नहीं पढ़ पाता। लोकलाज के कारण वह अपने मायके में भी 'जीने की जगह' नहीं मांग पाती। स्त्री के कारुणिक दशा का मर्मस्पर्शी चित्रण समकालीन कवियों में प्रभात प्रभावी तरीके से करते हैं। यथा-

तू मरना चाहती थी और हर किसी के सामने डबडब रोती थी

मगर किसी को बता नहीं पाती थी कि आखिर बात क्या है

तूने चाहा था कि तू किसी से कोई हिस्सा नहीं लेगी, रहने को ठौर हो जाए बस

कविता का अंतिम रूप विद्रोह का स्वरूप लिए हुए हैं। जहां अंततः वह अपना सुहाग और समाज के बंधन तोड़ देती है, लेकिन उसकी यह आज़ादी केवल मृत्यु के माध्यम से आती है। यह समाज की असफलता है कि एक स्त्री के लिए 'जीने की जगह' केवल श्मशान या फंदा ही बचता है। यथा-

चूड़ा फोड़कर बिखेर दिया और रो-रोकर कहा था—

यह ले गैबी, यह ले मेरी तरफ से देख यह तू

मर गया और अब मैं किसी की सुहागिन नहीं हूँ,

अब मैं खुद हूँ जो मैं हूँ

'गोबर की हेल' कविता: श्रम, अपमान और ममता का द्वंद्व का चित्रण करती हैं।कविता अपने प्रारंभिक पंक्तियों में स्त्री के श्रम के शारीरिक शोषण का अंकन करती हैं।बीमारी और कमजोरी के बावजूद स्त्री से वह श्रम कराया जाता है जो उसके शरीर की क्षमता से बाहर है। पुरुष वर्ग की संवेदनहीनता यहाँ हुक्का पीने के प्रतीक से दिखाई गई है। यथा-

वह अपना ही वज़न नहीं उठा पा रही थी कि उसे

गाय-भैंसों का गोबर उठाना पड़ रहा था

और घर के सभी पुरुष बैठे हुक्का पी रहे थे

इसी कविता के मध्य में सामाजिक क्रूरता का वर्णन कवि ने किया हैं।समाज और आस-पड़ोस की स्त्रियाँ भी उस दुर्दशा में 'रस' लेती हैं। वे बार-बार उस अपमानजनक घटना को दोहराती हैं जहाँ माँ ने हताशा में अपने बच्चे पर गोबर फेंक दिया था। यथा-

पर चूँकि इसमें वे एक क्रूर रस लेती हैं

बार-बार बताकर बार-बार

मेरी माँ को अपमानित करती हैं

जबकि उनकी बकवास का जवाब देने के लिए

वह तेईस साला स्त्री अब इस दुनिया में नहीं है

अंत में मातृत्व की विजय का यशोगान होता हैं।तमाम शोषण और मानसिक यंत्रणा के बावजूद माँ अपनी ममता नहीं खोती। वह 'गोबर में लिथड़े' बच्चे को गले लगाती है। यह दृश्य स्त्री की अटूट सहनशीलता और उसकी विवशता दोनों का चरमोत्कर्ष है। यथा-

जो न जाने कहाँ से लौटाकर ले आई होगी अपनी बिलखती ममता को

और मुझ गोबर में लिथड़े को उठाकर छाती से चिपका लिया होगा

फिर मेरे अमरत्व के लिए मुझे दूध दिया होगा

निष्कर्ष

प्रभात की कविताओं का अनुशीलन करने के पश्चात यह स्पष्ट होता है कि वे स्त्री को महज़ एक 'पात्र' नहीं, बल्कि 'अस्तित्व के लिए जूझती तपस्विनी' के रूप में देखते हैं। उनकी कविताओं में स्त्री दुर्दशा के तीन मुख्य आयाम उभरते हैं: आर्थिक शोषण (जहाँ उसे बेचा जाता है), शारीरिक शोषण (अत्यधिक श्रम और बीमारी) तथा सामाजिक-मनोवैज्ञानिक शोषण (जहाँ उसकी आवाज को लोकलाज से दबाया जाता है)।

कवि ने अत्यंत साहस के साथ पितृसत्ता की उन परतों को उघाड़ा है जहाँ पुरुष अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए स्त्री के जीवन को स्वाहा कर देता है। प्रभात की स्त्री हारती है, टूटती है, आत्महत्या करती है, किंतु अपनी चुप्पी से वह समाज पर सबसे घातक प्रहार करती है। प्रभात की कविताएँ स्त्री के 'शोक' को 'शक्ति' में बदलने का माध्यम तो नहीं बन पाई, लेकिन उन्होंने उस 'शोक' को इतनी प्रखरता से दर्ज किया है कि वह भविष्य के किसी भी स्त्री-आंदोलन के लिए एक अनिवार्य दस्तावेज बन गई हैं। उनकी कविताएँ हमें एक ऐसे समाज के निर्माण की प्रेरणा देती हैं जहाँ 'जीने की जगह' किसी फंदे में नहीं, अपितु सम्मानजनक जीवन में हो।

REFERENCES

1. मां -जीवन के दिन कविता संग्रह, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2020

2. हे राम- जीवन के दिन कविता संग्रह, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2020

3. गुम बच्चे की याद -जीवन के दिन कविता संग्रह, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2020

4. जीने की जगह-अपनों में नहीं रह पाने का गीत कविता संग्रह, साहित्य अकादमी नई दिल्ली, वर्ष 2014

5. गोबर की हेल -अपनों में नहीं रह पाने का गीत कविता संग्रह, साहित्य अकादमी नई दिल्ली, वर्ष 2014

6. सम्पादन राजस्थान साहित्यकार प्रस्तुति डॉ सत्यनारायण मोनोग्राफ राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, वर्ष 2014

7. बखत- पांचवां अंक,नवंबर 2023